eISSN 3139-2377
RESEARCH WORK
A Monthly, Open Access, Peer Reviewed International Research Journal
Volume 02, Issue 02, February 2026

नारी जीवन : लैंगिक समानता और सशक्तीकरण

डॉ0 राजेश कुमार यादव[1]
[1]असि0 प्रोफेसर– अर्थशास्त्र, के0एन0 राजकीय पी0 जी0 कालेज ज्ञानपुर, भदोही उ0प्र0

Received: 20 Feb 2026 Accepted & Reviewed: 25 Feb 2026, Published: 28 Feb 2026

Abstract

नारी शब्द अपने आप में सरल प्रवाह सा लगता है, जो बड़ी सहजता के साथ ,युगों–युगों से, ढ़ेरो बाधाओ के बीच से बहता चला आ रहा हैं। बहाव के कई पड़ाव पर उतार भी देखे है तो चढ़ाव भी देखा है उसने। बावजूद इसके वह सतत् रूप से बहता चला आ रहा है। आज चारों तरफ इस कदर फैल गया है कि इसकी गूज कभी भी कही भी सुनी व समझी सकती है। नारी शब्द के बिना समाज सदैव अधूरा और सूना बना रहेगा। इस सुनेपन व एकाकीपन से एक स्वस्थ समाज की कल्पना करना भी एक प्रकार की बेइमानी होगी। पुरूष समाज को ये बात कब समझ में आयेगी की बिना लैंगिक समानता और सशक्तीकरण के मानव समाज कभी भी किसी तरह से साकार नही हो सकता। वैसे समझता तो वो भी है परन्तु लगता है जैसे वो जानकर भी अंन्जान बना बैठा है। चाहे जो भी हो खामियाजा तो देर सबेर उसको उठाना तो पड़ेगा ,उसे गलतफहमी में नही जीना चाहीए।

मुख्य शब्द : लैंगिक समानता, सशक्तिकरण, वैदिक काल, ऋग्वैदिक आदर्श, पुनर्विवाह आदि।

Introduction

नारी ने समाज की हर एक समस्या के समाधान में अपनी उपस्थित दर्ज कराई है। खुबसूरत प्रकृति की एक सुन्दर सी काया है वह जिसे यू हि नजरअंदाज नही किया जा सकता है और न ही छोड़ा जा सकता है। जीवन की संरचना का आधार है नारी फिर इतना परेशान क्यों होती है नारी। सदिया बीत गयी और बिततीय चली जायेगी क्या उसकी परेशानियों से पुरूष समाज रूबरूब हो पायेगा, पता नही क्या होगा ईश्वर जाने। मानवीय सभ्यता के अस्तित्व के शुरूवात की प्रथम सिढ़ी नारी ही है इसे कही से भी नकारा नहीं जा सकता है और न ही नकारने का सवाल उठ पायेगा। पुरूष प्रधान मानसिकता सदियों पहले कैसे विकसित हो गयी यह भी सोचने व समझने की विषय वस्तु है, शोध का विषय हैं। प्रथम दृष्या ये बात महसुस की जा सकती है कि कही ना कही सामाजिक संरचना का ढाचा निर्माण करते समय पुरूषों ने एक तरह से महिलाओं के साथ ना मॉफ किया जाने वाला छल ही किया है।

प्राचीनकाल में नारियों का जीवन अत्यन्त कठीन दौर से गुजरां वजह सम्मान की हर स्तर पर कमीं बनी रही और न ही इसका विरोध महिलाओं के किसी भी स्तर पर किया गया इसकी वजह से उनका सामाजिक स्तर जहॉ का तहॉ रह गया। यही कारण रहा कि उनके जीवन में संसाधनो के अभाव के साथ सम्मान का अभाव भी रहा है। हम यू भी कह सकते है कि सम्मान नाम की कोई चीज भी नारी जीवन मे होती भी है कि नहीं, इस समझ का भी ज्ञान नही था। नारी का जीवन तमाम विपरित परिस्थितियों से गुजरते हुए, संधर्ष का सामना आज तक नारी ने किया है। वो भी क्या दिन रहें होगें जब नारी नें धरती पर कदम रख्खा होगा । कल्पना कर के जाना या समझा जा सकता है कि कैसे जीवन की सुरक्षा से संघर्ष कर जीवन यापन किया जा सकता हैं। नारी ने हर वक्त अपने आप को पुरूष सत्ता के साथ संधर्ष करता हुआ पाया है। समाज के एक तपके ने धर की चहार दीवारी से नारी को धेरे रखा उसे कभी भी बाहर

eISSN 3139-2377
RESEARCH WORK
A Monthly, Open Access, Peer Reviewed International Research Journal
Volume 02, Issue 02, February 2026

निकलने नही दिया। अथार्थ उसे बाहर की दूनियॉ से अनभिग्य रखा गया जो एक तरह से अन्याय का घोतक है।जीवन अमूल्य है चाहे वह नारी का हो या पुरूष का उससे किसी को वंचित करना समाज का सबसे बड़ा अपमान है। आपसी सामंजस ही दोनों को किसी भी समस्यॉ के समाधान में मदत करेगा। इसलिए दोनो की ये नैतिक जिम्मेदारी बनती है कि वे एक दूसरे को समझे और जीवन को आगे बढ़ायें।

प्रारंभिक वैदिक काल में स्त्री–पुरुषों के बीच एकता के लिए जगह थी, लेकिन उत्तर वैदिक काल में किसी न किसी तरह उनके बीच एकता और समानता में गिरावट आई, खासकर महिलाओं की स्थिति, जो प्रारंभिक वैदिक काल में समान थी, बाद के वैदिक काल में गिरावट की ओर अग्रसर हुई। ऐसा माना जाता है कि उस युग में महिलाओं की स्थिति में गिरावट का मुख्य कारण विदेशी विजय थी। निष्पक्षता और सद्भाव के ऋग्वैदिक आदर्शों का क्षरण हुआ, जिसने महिलाओं को वेदों का अध्ययन करने, वैदिक मंत्रों का पाठ करने और वैदिक अनुष्ठानों का पालन करने के उनके अधिकार का आनंद लेने से वंचित कर दिया। महिलाओं को विवाह करने या गृहस्थ जीवन में शामिल होने और अपने पति के प्रति अटूट समर्पण रखने के लिए मजबूर किया गया। उस समय माता–पिता को लड़की के जन्म पर शर्म आती थी।यही वजह है कि इसने समाज में कई और कुरीतियों को जन्म दिया जिससे महिलाओं का जीवन और भी मुश्किल हो गया। सती प्रथा, जौहर, लड़कियों की शिक्षा निषेध, विधवा विवाह, बाल विवाह जैसी कई पाबंदियाँ थीं।

प्राचीन काल में मानवी समाज का सामाजिककरण आज की तुलना में बिल्कुल नगण्य था। आज की स्थिति को प्राप्त करने में नारियों को हजारों वर्ष लग गये होगे इसमें कोई दो राय नही कि इस दौरान उन्हे कई समस्याओं के बीच से गुजरना पड़ा होगा। अशिक्षा तात्कालिन समाज का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा थी लोगों का इससे दूर–दूर तक कोई नाता नहीं दिखाई देता था। खामियाजा अंध्यविश्वास में बढ.ोतरी जिसने जो उपदेश दिया उसे उसी रूप में स्वीकार कर अपने जीवन में उतार लिया। इसे ही जीया जीवन भर और इसे ही अपने बच्चों को सिखायॉ, समझाया व उनका लालन – पालन भी इसी के साथ किया। आने वाली पीढ़ियों ने भी इसी का अनुशरण किया। यह धीरे–धीरे अपने पैर पसारते चला गया और नारी समाज को पुरी तरह जकड़ लिया। जकड़न भी ऐसी–वैसी नही थी कि कुछ समय अन्तराल बाद निकलना भी चाहे तो बच कर निकल सके। आने वाली पीढ़ियो के बारे में जहॉ तक सोचा जाय तो यह बात मुखर होकर सामने आती है कि अंधविश्वासों से बचने की कौन कहे यहॉ तो उलटे लोग अंधविश्वासों के ही प्रचार में लग गये। छोटे–छोटे बच्चों को जीवन के प्रारंम्भ से ही अंधविश्वासों के साचे में ढ़ालना शुरू कर दिया गया। जानकारी का अभाव व नासमझि में बच्चे उसी तरह ढ़लते गये जैसा लोगों ने कहॉ और समझाया। बचपन को आप जिस ढ़ाचे में रखकर जैसा बनाना चाहेगें वह उसी रूप में समाज के सामने आयेगा।इस काम में मानों पुरूष वर्ग को महारत हासिल थी वह हर प्रकार का शोषण बिना किसी संकोच के प्रायः करता रहता था। बेटियों को समाज में किसी भी प्रकार का कोई अधिकार नही था उन्हें हर अधिंकार से मानो वंचित रखा गया था। अधिकारो से वंचित रखना मानो उसकी अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बन चुका था।

मध्यकाल में विधवा पुनर्विवाह की अनुमति नहीं थी। महिलाओं को भौतिक वस्तु मानना आम बात थी। मध्यकाल में विधवाओं को अभिशप्त माना जाता था। ऐसा माना जाता था कि विधवा होने पर वह अत्याचार और दुर्भाग्य लाती है। विधवा होने के बाद उस महिला को घर के हर उस सुख–सुविधा का त्याग करना पड़ता है जिसका वादा उसके पति ने विवाह के समय किया था। विधवाओं के लिए किसी भी पवित्र अनुष्ठान या स्थान में कोई स्थान नहीं था। उन्हें पुनर्विवाह की अनुमति नहीं थी। उन्हें शांतिपूर्ण जीवन

eISSN 3139-2377
RESEARCH WORK
A Monthly, Open Access, Peer Reviewed International Research Journal
Volume 02, Issue 02, February 2026

जीने के लिए कोई विकल्प नहीं दिया जाता था। उन्हें हमेशा फीके सफेद कपड़े पहनने पड़ते थे और उन्हें बहुत ही विशिष्ट भोजन करना पड़ता था जो केवल विधवाएं ही खाती थीं।[1] महिलाओं के लिए कोई शिक्षा नहीं थी। इस बात के प्रमाण उपलब्ध हैं कि अतीत में महिलाओं की शिक्षा तक पहुँच थी, लेकिन उत्तर वैदिक काल में परिदृश्य पूरी तरह बदल गया, उनकी शिक्षा का आयाम बदल गया और उन्हें सभी घरेलू कार्य सिखाए जाने लगे। वहीं दूसरी ओर मुस्लिम धर्म में उन्हें ललित कला की शिक्षा दी जाती थी। फिर भी इस काल में महिलाओं की पीड़ा कभी कम नहीं हुई।

एक बेटी ने, एक बहन ने, एक मॉ ने किस कदर तात्कालिन पुरूष वर्चस्व वाले समाज के अत्याचार व शोषण को आजीवन सहा होगा उसको इतिहास के पन्नो में भी कहीं जगह शायद ही नसीब हुई हो। हद तो तब हो जाती है जब कोई तो हो जो महिलाओं के प्रति हो रहे अत्याचार के खिलाफ समाज में उनकी तरफ से आवाज उठा सके। सब शान्त बोले तो कौन बोले। किसी ने भी कहीं से भी कभी आवाज उठानें का थोंड़ा भी प्रयास किया होगा उसे सामाज से बाहर की राह दिखा दिया गया होगा। डर , भय के कारण किसी ने चाह कर भी हिम्मत नहीं जुटा पाई होगी। सभी पुरूषो को इसमें दोष देना न्यायसंगत नहीं होगा, किया तो गिंनती के चंन्द लोंगो ने, अधिकतर ने तो मात्र उनके साथ हा में हा मिलाकर बस उनका अनुसरण किया, ऐसा मात्र वाहवाही में अपने को श्रेष्ठ समझने के लिए किया। सदियों तक इस परंम्परा की चादर मोंटी होती गयीं होगी, तात्कालिक समाज ने शायद ही कभी इस पहलू पर विचार किया होगा। ऐसा कब तक चला होगा, और क्या– क्या महिला समाज ने झेला होगा, कुछ भी पता नहीं। मुझे नहीं लगता कहीं किसी इतिहास की किताब के पन्नों में इसको जगह दी गयीं होगीं। देता भी कौन जब समाज में शिक्षा का अधिकार मात्र पुरूषो के पास ही सुरक्षित था।

भारत में महिला सशक्तिकरण के इस आधुनिक काल की शुरुआत में, ईस्ट इंडिया कंपनी के दौरान कई नाम सामने आते हैं। उस समय बेगम हजरत महल, उदा देवी और अजीजुन बयाल जैसी असाधारण बहादुर महिलाएँ थीं, और उनमें से एक झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई भी हैं।धीरे–धीरे भारत में महिला सशक्तिकरण की यह लड़ाई जोर पकड़ती गई। सामाजिक सुधार हुए और राजा राममोहन राय, ईश्वर चंद्र विद्यासागर, स्वामी विवेकानंद और स्वामी दयानंद सारस्वत जैसे कई पुरुषों ने भी इनमें भाग लिया। इन सभी ने महिलाओं को समाज में उनका पुराना दर्जा वापस दिलाने में मदद की।इस सशक्तिकरण की उत्पत्ति और इसकी अवधारणा 1960 में संयुक्त राज्य अमेरिका के नागरिक अधिकार आंदोलनों में सामने आई थी।[2]

ब्रिटिश शासकों और इंग्लैंड तथा यूरोप के अन्य हिस्सों से आए मिशनरियों की गतिविधियों ने भारतीयों के सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में कुछ बदलाव लाए। मिशनरी महिला शिक्षा के पक्षधर थे और उन्होंने कलकत्ता, बंबई और मद्रास में लड़कियों के लिए कई स्कूल स्थापित किए। सरकार की पहल उल्लेखनीय थी। 19वीं सदी में भारत में लड़कियों की शिक्षा को काफी बढ़ावा मिला और पितृसत्तात्मक मानदंडों का विरोध किया गया जो उनकी शिक्षा के विरुद्ध थे। महिलाओं की शिक्षा के लिए विभिन्न शिक्षा समितियों की सिफारिश की गई। 1854 के शिक्षा प्रेषण में, महिला शिक्षा पर भारी दबाव बनाया गया। इसके परिणामस्वरूप भारत के विभिन्न हिस्सों में कई बालिका विद्यालय स्थापित किए गए।

स्वतंत्रता के बाद के युग में भारत में महिला सशक्तिकरण के आंदोलन धीमे पड़ गए। बहुत सी महिलाएँ अपने घरों को लौट गईं क्योंकि उन्हें उपनिवेशवादियों के खिलाफ लड़ने की कोई जरूरत नहीं थी। अन्य

eISSN 3139-2377
RESEARCH WORK
A Monthly, Open Access, Peer Reviewed International Research Journal
Volume 02, Issue 02, February 2026

महिलाएँ इस बात से संतुष्ट थीं कि परिषद ने उन्हें समानता का वादा किया, समान नागरिक संहिता (अनुच्छेद 44) की आशा जगाई, और सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार दिया जिससे उनकी समस्या और कम हो गई। इससे उत्पीड़न, भेदभाव, दहेज हत्या, बेरोजगारी, घटता लिंगानुपात, स्वास्थ्य सेवा का अभाव और शिशु मृत्यु दर आदि में वृद्धि हुई। पूरे भारत में सामाजिक–राजनीतिक अशांति थी। जिसके परिणामस्वरूप संयुक्त राष्ट्र द्वारा भारत में महिलाओं की स्थिति पर समिति, सीएसडब्ल्यूआई, की नियुक्ति की गई।आजादी और संविधान लागू होने के 30 साल बाद भी भारत में महिला सशक्तिकरण के लिए कोई खास काम नहीं हुआ। उनके स्वास्थ्य सेवा, शिक्षा, रोजगार आदि के क्षेत्र में उपेक्षा की गई।[3] महिलाओं की राजनीतिक और आर्थिक भागीदारी बहुत कम रही।

महिलाओं के मानवाधिकारों की शुरुआत महिलाओं के अनुभवों से होती है, जिन्हें मानवाधिकारों को देखने का प्रारंभिक बिंदु माना जाता है। नारीवादी विश्लेषण और अधिकार समर्थकों का कहना है कि लैंगिक दृष्टिकोण के आधार पर सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और कानूनी संरचनाएँ और प्रक्रियाएँ महिलाओं के जीवन के अनुभवों पर एक दृष्टिकोण रखती हैं। महिला अधिकार आंदोलनों के वैश्विक प्रयासों को उजागर करना आसान नहीं है।[4] महिला अधिकार का अर्थ केवल महिलाओं की स्थिति और उनके स्वाभाविक जीवन में सुधार, पुनर्निर्माण और सुधार लाना ही नहीं है। महिलाओं के मानवाधिकारों की व्याख्या दो तरह से की जा सकती है। एक तो मानवाधिकारों का सामान्य ढाँचा, जिसमें भेदभाव न करने का सिद्धांत है जो सभी पर लागू होता है, जिसमें महिलाएँ भी शामिल हैं। दूसरा, अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कानून में लिंग–विशिष्ट प्रावधानों से संबंधित है। महिलाओं द्वारा सभी प्रकार की हिंसा और भेदभाव का अनुभव स्थानीय परिवेश से ही उत्पन्न हुआ, यह इसलिए आसान था क्योंकि महिलाओं को कभी बुनियादी शिक्षा नहीं मिली जिससे वे खुद को भेदभाव और हिंसा से बचा सकें।

महिलाओं के राजनीतिक सशक्तीकरण को उनके वास्तविक सामाजिक सशक्तीकरण में बदलना बहुत मुश्किल काम था क्योंकि यह पता चला कि स्थानीय निकायों में महत्वपूर्ण संख्या में महिलाओं के अस्तित्व के बावजूद, विधायिका में महिलाएं अभी भी लैंगिक हिंसा की चपेट में हैं। महिलाओं की राजनीतिक भूमिकाओं के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण में कभी कोई बदलाव नहीं आया, लेकिन पितृसत्ता अभी भी राजनीतिक दुनिया में महिलाओं के लिए बाधाएं पैदा करने में कुटिलता से सक्रिय है। इसके अलावा, महिलाएं सभी वर्गों, जातियों, जातीयता आदि के साथ–साथ स्थानीय निकायों के साथ विधायिका में अधिक प्रतिनिधियों की हकदार हैं। यह लोकसभा में महिला सदस्यों की अग्रणी भूमिका से सुनिश्चित हुआ, जब उन्होंने घरेलू सहायकों को, जो हमारे समाज के सबसे कमजोर वर्गों में से एक हैं और जिन्हें रोजगार की परिभाषा से बाहर रखा गया है।[5] भारत में अर्थव्यवस्था और महिला सशक्तिकरण की अवधारणाएँ एक–दूसरे पर निर्भर हैं। भारत के आर्थिक विकास में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है, वे कई दशकों से बंधुआ मजदूरी के रूप में इसमें भाग ले रही हैं और उन्हें बहुत कम वेतन मिलता है। लगभग सभी देशों में, राष्ट्रीय आय लेखांकन में राष्ट्र की आर्थिक समृद्धि में महिलाओं के योगदान को अभी भी अनदेखा किया जाता है।

शिक्षा का अधिकार मानव जीवन का अहम विषय है, किन्तु यह अधिकार जब चंद लोगों ने अपने पास ही सुरक्षित कर लिया हो तो ऐसी शिक्षा का क्या औचित एक बहुत ही बड़े समाज के लिए। शिक्षा का तात्पर्य लोगो में जानने समझने के गुण का निर्माण करना है। अब प्रश्न उठता है कि किस प्रकार कि शिक्षा होनी चाहीए ,सामाजिक या अन्धविश्वासी अथार्त सामाज में समझ या सोच पैदा करने वाली या फिर समाज में

eISSN 3139-2377
RESEARCH WORK
A Monthly, Open Access, Peer Reviewed International Research Journal
Volume 02, Issue 02, February 2026

अन्धविश्वास पैदा करने वाली। समाज में सोच व समझ पैदा हो इसके लिए जरूरी है कि समाज के एक तबके को बेहतर शिक्षा दी जाय जिसमें अन्धविश्वास कही से भी झलकता न हो। महिला सशक्तीकरण के ढ़ेरो पैरामीटर है, उसको सामाज के सामने तमाम प्रचार के संसाधनों के माध्यम से रखा जाता है ,प्रसारित किया जाता है किन्तु विडम्बना देखियें कि उसे कभी भूलकर भी अमल में नहीं लाया जाता है बस एक औपचारिकता पुरी कर ली जाती है वो भी मात्र दिखावा बस । जब तक पुरूष प्रधान समाज वास्तव में अपनी नैतिक जिम्मेदारी नही निभाता तब तक बहुत बड़ा बदलाव सामाज में संम्भव नहीं है। वैसे अब देखा जाय तो वर्तमान में नारीयों ने स्वंग आत्मनिर्भर व सशक्त होना शुरू कर दिया है, सामाजिक बंदिशों से अपने आप को किनारे करना शुरू कर दिया है। यह प्रक्रिया आगे चलकर उन्हे सतत् मजबूत करती रहेगी।

सन्दर्भ ग्रथः–

1– भारतवर्ष का सामाजिक इतिहास , डॉ0 विमल चन्द्र पाण्डेय, हिन्दुस्तानी एकेडमी, (2000)

2–लैगिक असमानता का समाज पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव एवं महिला सशक्तीकरण , मंजू देवी, (2012)

3–प्राचीन भारतीय इतिहास और संस्कृति के पहलु : नई धारणा , जी0 पी0 सिंह (2003)

4–महिला इतिहास : निरंतरता और परिवर्तन में एक अध्धयन ,महिला इतिहास समीक्षा, बैनेट, जुडिश (2025)

5–आधुनिक मध्य पूर्व में महिलाओं और लिंग का सामाजिक इतिहास, ली मेरिवेदर (1999)